International Research Journal of Human Resource and Social Sciences
ISSN(O): (2349-4085) ISSN(P): (2394-4218)
Impact Factor 5.414 Volume 7, Issue 11, November 2020
Website- www.aarf.asia, **Email** : editoraarf@gmail.com

भारतीय उच्च शिक्षा का निजीकरण : आवश्यकता या विवशता

डॉ0 ललित कुमार आर्य
पूर्व सीनियर एकेडमिक फैलो, आईसीएचआर, नई दिल्ली
प्रो0 जे0एस0 भारद्वाज
पूर्व विभागाध्यक्ष एवं संकायाध्यक्ष, शिक्षा विभाग, चौ0 चरण सिंह विश्वविद्यालय, मेरठ

सारांशः प्रस्तुत शोध पत्र में भारतीय उच्च शिक्षा का निजीकरण आवश्यकता अथवा विवशता के सम्बन्ध में अध्ययन किया गया है। उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रम में बढ़ती भीड़ को नियन्त्रित करने पर किसी की असहमति नहीं होनी चाहिए। देश के युवा वर्ग को उच्च शिक्षा के भँवर जाल में फँसकर निरूद्देश्य भटकने और कुंठाग्रस्थ होने से बचाया ही जाना चाहिए। सामान्य उच्च शिक्षा में प्रवेश रूचि, योग्यता और क्षमता के आधार पर ही मिलना चाहिए। विश्वविद्यालयों को भी चाहिए कि वे अपने कार्य–कलापों मं वित्तीय अनुशासन का पालन कर अपने वित्तीय स्थिति को सुदृढ़ करें और सरकार पर अपनी निर्भरता को कम करें। सरकार को अपने कार्य–कलापों द्वारा कल्याणकारी राज्य की भूमिका का निर्वाह करते हुए मानव संसाधनों का विकास कर राष्ट्र के चतुर्मुखी विकास में अपना सार्थक योगदान देना चाहिए।

किसी राष्ट्र के विकास में भौतिक संसाधनों के साथ–साथ मानव संसाधन की महत्वपूर्ण भूमिका होती है। राष्ट्र का भविष्य क्या होगा इसका निर्धारण, मानव संसाधन तैयार करने वाली प्रयोगशालाओं अर्थात् शिक्षण संस्थानों की स्थिति पर निर्भर करता है। राष्ट्रीय शिक्षा आयोग (1964) ने अपनी रिपोर्ट में ठीक ही कहा है कि भारत के भविष्य का निर्माण उसकी कक्षाओं में हो रहा है। दक्ष एवं प्रशिक्षित मानव संसाधन तैयार करने का दायित्व शिक्षा विशेषकर उच्च शिक्षा पर होता है। भारत के विजन 2020 के तहत 2020 तक विकसित राष्ट्रों की श्रेणी में स्थापित करने के लिए उच्च शिक्षा व्यवस्था को अधिक गतिशील व्यापक एवं प्रासंगिक बनाना होगा।

भारतीय उच्च शिक्षा व्यवस्था का वर्तमान ढाँचा विश्व–शिक्षा व्यवस्था में तीसरे नम्बर पर आती है। आज देश में 20 केन्द्रीय विश्वविद्यालय 216 राज्य स्तरीय विश्वविद्यालय और 102 डीम्ड विश्वविद्यालय हैं। 2005–06 तक भारत में कॉलेजों की संख्या 17625 थी जिसमें 1700 महिला कॉलेज थे। उच्च शिक्षा में नामांकित छात्रों की संख्या 98.9 लाख (लगभग) तथा शिक्षकों की संख्या 4.72 लाख हो गई है। (योजना–मई 2007) इतना बड़ा ढाँचा होने के बावजूद यदि उच्च शिक्षा में नामांकन का ग्राफ काफी नीचे है। वर्तमान में उच्च शिक्षा में प्रवेश हेतु सन्दर्भित आयु वर्ग (18 से 23 वर्ष का 7 प्रतिशत ही उच्च शिक्षा में प्रवेश कर पा रहा है जबकि यह दर विश्व औसत 23 प्रतिशत से बहुत कम है)। राष्ट्रीय ज्ञान आयोग ने 2015 तक उच्च शिक्षा में नामांकन की दर को 15 प्रतिशत तक करने के लिए व्याप्क पैमाने पर उच्च शिक्षा ढाँचे में निवेश करने की आवश्यकता पर बल दिया है। ज्ञान आयोग के प्रतिवेदन के अनुसार अभी तत्काल में 1500 नए विश्वविद्यालयों को खोलने की आवश्यकता है। यहाँ सबसे महत्वपूर्ण प्रश्न यह है कि इतने व्यापक पैमाने पर निवेश के लिए धन कहाँ से प्राप्त किया जाए। भारत की केन्द्रीय सरकार द्वारा शिक्षा के लिए आवंटित धनराशि के आँकड़ों का विश्लेषण करें तो कुछ स्थितियाँ बिल्कुल स्पष्ट हो जाती है–

© Association of Academic Researchers and Faculties (AARF)
A Monthly Double-Blind Peer Reviewed Refereed Open Access International e-Journal - Included in the International Serial Directories.

1. पहली पंचवर्षीय योजना (1951–56) से ही प्राथमिक शिक्षा के विस्तार पर सर्वाधिक ध्यान दिया गया।
2. विभिन्न पंचवर्षीय योजनाओं में शिक्षा के लिए आवंटित धनराशि में से उच्च शिक्षा हेतु आवंटन सबसे कम रहा।
3. 1995 के बाद से उच्च शिक्षा के लिए धन आवंटन में कमी की गई है।

उच्च शिक्षा ने निजीकरण का सम्प्रत्यय मुख्यतः वित्तीय निर्धारण (स्रोत) पर निर्भर करता है। शिक्षा के निजीकरण को अर्थव्यवस्था के निजीकरण के सम हिस्से के रूप में देखा जाता है। तिलक ने उच्च शिक्षा के निजीकरण को वित्त स्रोत के आधार पर परिभाषित करत हुए इसे चार वर्गों में विभाजित किया–

- पूर्णतः निजीकरण अर्थात् उच्च शिक्षा कॉलेज एवं विश्वविद्यालयों का पूर्ण निजीकरण जिसमें वे वित्त एवं अनुदान की व्यवस्था निजी क्षेत्र से करेंगे एवं सरकार का उन पर न्यूनतम नियन्त्रण होगा।
- निजीकरण का एक विशिष्ट रूप जिसमें सार्वजनिक उच्च शिक्षा की पूर्ण लागत को विद्यार्थियों, शिक्षकों एवं उसमें लगे कर्मचारियों से ही लिया जाए। इस प्रकार निजीकरण तार्किक रूप से स्वीकार्य नही है।

निजीकरण का माध्यम रूप जिसमें कुछ बाध्यतओं एवं शर्तों के साथ निजी क्षेत्र को प्रवेश दिया जाता है।

शिक्षा किसी भी देश और सभ्य समाज की बुनियादी आधार होती है जिसके बिना हम विकास की कल्पना नहीं कर सकते। चाहे वह तकनीकी विकास हो या आर्थिक समृद्धि, बिना उचित शिक्षा के कुछ भी सम्भव नहीं है। शिक्षा की इसी महत्ता को समझते हुए महान विद्वान और भारत के प्रथम उपराष्ट्रपति डॉ0 सर्वपल्ली राधाकृष्णन ने कहा था कि ''शिक्षा किसी भी देश का मूल आधार होती है और यदि किसी देश का विकास करना है तो यह आवश्यक है कि पहले वहाँ की शिक्षा व्यवस्था को ठीक किया जाता''। इसी प्रकार महान राजनीतिक विचारक 'प्लेटो' ने कहा था कि ''एक आदर्श समाज की स्थापना बिना उपर्युक्त शिक्षा के सम्भव नहीं है''।

अतः समाज और देश के विकास में शिक्षा के महत्व को भली–भांति समझा जा सकता है। आज विश्व के जो भी विकसित देश हैं उनके विकास में उच्च शिक्षा के ढाँचे ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है परन्तु भारत में उच्च शिक्षा की स्थिति बहुत ही चिन्ताजनक दौर से गुजर रही है। भारत के कुछ चुनिंदा शैक्षणिक संस्थानों को छोड़ दिया जाये तो यहाँ उच्च शिक्षा की स्थिति अत्यन्त ही चिन्ताजनक है। इसी भयावह स्थिति में निजी शिक्षण संस्थानों की स्थापना ने भाग में ही डालने का काम किया है जिनका एकमात्र उद्देश्य अधिक से अधिक लाभ अर्जित करना है न कि युक्त शिक्षा प्रदान करना। प्रस्तुत लेख में भारत में उच्च शिक्षा की स्थिति और उनमें सुधार की आवश्यकता के सम्बन्ध में विचार व्यक्त किया गया है।

दूसरे विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों पर दबाव बढ़ते चले जाने से उनकी शैक्षणिक गुणवत्ता पर भी व्यापक प्रभाव पड़ रहा है। सरकारें सस्ती लोकप्रियता प्राप्त करने के प्रयास में प्रायः विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों में सीटों की संख्या में वृद्धि कर देती है परन्तु जिस अनुपात में सीटों की संख्या की वृद्धि की जाती है उस अनुपात में न तो शिक्षण संस्थाओं का आधारिक ढाँचा बढ़ाया जाता है और न ही शिक्षकों की संख्या में वृद्धि की जाती है। यही कारण है कि शिक्षक और छात्र का जो अनुपात होना चाहिए उनमें काफी विषमता आ जाती है जैसे यू0जी0सी0 के अनुसार किसी भी परिस्थिति में किसी शैक्षणिक संस्थान में शिक्षक और छात्र का अनुपात 80 और 1 का होना चाहिए। अर्थात् प्रत्येक 80 छात्र पर एक शिक्षक परन्तु यह मानक देश के चुनिंदा शैक्षणिक संस्थाओं पर ही लागू

हो जाता है। उ0प्र0, बिहार, झारखण्ड, म0प्र0 और छत्तीसगढ़ जैसे राज्यों में तो यह अनुपात शायद ही किसी शैक्षणिक संस्थान में पूरा होता है। यही कारण है कि इन राज्यों में कहीं–कहीं पर तो पाँच सौ तक के ऊपर छात्रों पर भी एक शिक्षक का अनुपात नहीं आ पाता है। ऐसे परिस्थिति में शिक्षा की क्या गुणवत्ता होगी इसी बात का सहज अन्दाजा लगाया जा सकता है।

उच्च शिक्षा की बढ़ती माँग और विश्वविद्यालयों पर बढत्रते दबाव को देखते हुए निजी क्षेत्र ने भी उच्च शिक्षा में अपने पैर पसारने शुरू कर दिया है। विशेष कर यह देखते हुए कि इसमें एक बार निवेश कर देने के बाद बिना किसी जोखिम के लाभ ही लाभ मिलने वाला है। निजी शैक्षणिक संस्थाओं की उपस्थिति ने इस बात को जन्म दे दिया है कि क्या वे गुणवत्ता प्रधान शिक्षा उपलब्ध करा रहे हैं या और उनका उद्देश्य भी वही है जो एक शैक्षणिक संस्था की स्थापना के समय होना चाहिए या वह महज अपने आर्थिक लाभ या निजी हितों की रक्षा के लिए इस महान और पवित्र क्षेत्र में प्रवेश कर रहे हैं। इस सन्दर्भ में उ0प्र0 में निजी शैक्षणिक संस्थाओं की गुणवत्ता का उदाहरण विशेष रूप से दिया जा सकता है। 1999 में तत्कालीन भाजपा सरकार ने बढ़ती हुई छात्र संख्या की बाढ़ को देखते हुए निजी क्षेत्र में डिग्री कॉलेज खोलने की अनुमति प्रदान कर दी और साथ ही साथ इसके लिए 40 लाख अनुदान देने का भी प्रावधान किया गया जिसके कारण प्रदेश भर में निजी कॉलेज खोलने की होड़ लग गई। नेता शिक्षा माफिया, और दबंग जैसे लोग इसमें विशेष रूप से अग्रणी रहे। इससे पूरे प्रदेश में निजी कॉलेजों की जैसी बाढ़ आ गई।

पर उन्हें मानने की व्यवहारिक मजबूरी नही है क्योंकि शिक्षकों की नियुक्ति और चयन का मामला प्रदेश सरकार ने प्रबन्धकों की मर्जी पर छोड़ दिया जिसका दुष्परिणाम यह हुआ कि कहीं–कहीं पर स्नातक अध्यापक परास्नातक कक्षाओं में पढ़ रहे हैं। यू0जी0सी0 का यह आदेश है कि डिग्री कॉलेजों में नेट या पी.एच.डी. डिग्री धारक ही अध्यापन कार्य कर सकते हैं परन्तु बहुत ही कम विद्यालयों में इस मानक को पूरा करने वाले अध्यापक अध्यापन कार्य कर रहे हैं। इन अध्यापकों को प्रबन्ध समितियों द्वारा 10000 से लेकर 15,000 तक प्रतिमाह वेतन दिया जाता है। एक ही विश्वविद्यालय के एक ही जिले में स्थापित अलग–अलग विद्यालयों में अलग–अलग वेतन दिया जाता है। 90 प्रतिशत निजी शिक्षा संस्थाओं में अनुमोदन किसी का है और पढ़ा कोई और रहा है। किसी–किसी विद्यालय में तो एक भी योग्य अर्थात् नेट अथवा पी0एच0डी0 धारक अध्यापक का कार्य नहीं रहा है। वास्तव में होता यह है कि योग्यता के मानकों पर खरा उतरने वाले शिक्षकों को कुछ पैसे देकर उनके प्रमाण–पत्र पत्र अनुमोदन करा लिया जाता है और उनके स्थान पर पढ़ाने के लिए किसी को भी 15000 और 20000 पर रख लिया जाता है। इसके लिए कॉलेज प्रबन्धक से लेकर विश्वविद्यालय तक के अधिकारियों में लेन–देन होता है।

भारतीय प्रौद्योगिकी संस्थान (आई0आई0सी0) भारतीय प्रबन्ध संस्थान (आई0आई0एम0) कुछ मेडिकल कॉलेजों और महानगरों के कुछ उच्च शिक्षण संस्थानों को छोड़ दिया जाए तो भारत की उच्च शिक्षा विश्व स्तरीय तो दूर एशिया के प्रमुख देशों के स्तर की भी नहीं है। विश्व के चुनिंदा 300 विश्वविद्यालयों में भारत का एक भी विश्वविद्यालय न होना यह दर्शाता है कि सरकार ने युवाओं को गुणवत्ता प्रधान उच्च शिक्षा प्रदान करने की कोई विशेष योजना नहीं बनाई। आज भारत में जितने भी विश्वविद्यालय हैं उनकी संख्या देश के युवाओं के दसवें हिस्से को भी शिक्षित करने लायक नही है। यद्यपि उच्च शिक्षा में सुधार के लिए गठित समितियों ने अनेक बाद यह सिफारिश की कि इसके लिए बजट को कम से कम दो गुणा कर दिया जाए परन्तु इन सिफारिशों पर ध्यान नहीं दिया गया। ऐसा तब किया गया जब भारत उच्च शिक्षा में विकसित और विकासशील के मुकाबले सबसे कम धन खर्च कर रहा है। कई बार तो यह भी प्रतीत होता है कि हमारे देश के राजनेता समाज के उच्च शिक्षित होने से भयभीत नजर आते हैं क्योंकि उन्हें डर लगता है कि यदि अगर वोट बैंक शिक्षित होकर सही निर्णय लेने लगेगा तो फिर वे सबसे वरगला कर वोट नहीं ले सकेंगे। आखिर बड़ी तादात में मामूली रूप से शिक्षित युवाओं की फौज लेकर हम देश को विकसित बनाने की परिकल्पना कैसे कर सकते हैं। ध्यान रहें कि विश्वविद्यालयों से निकलने वाले स्नातकों का दस प्रतिशत ही अच्छी नौकरियाँ हासिल करने के योग्य होते हैं जिसका अर्थ हुआ कि 90 प्रतिशत डिग्री धारक देश के विकास में उपयुक्त योगदान देने में समर्थ नही है।

शिक्षा के क्षेत्र में गुणात्मक परिवर्तन तभी लाया जा सकता है जब पूर्णरूपेण राजनीतिक इच्छा शक्ति का परिचय दिया जाएगा। दुर्भाग्य से ऐसी इच्छा शक्ति का परिचय न तो पूर्ण की सरकारों ने दिया और न ही वर्तमान केन्द्र सरकार दे रही है। यानि ऐसा नहीं होता तो हमोर वर्तमान मानव विकास संसाधन मंत्री अर्जुन सिंह केवल उच्च शिक्षा की बदहाली का जिक्र करके नहीं जाते। आखिर वह उच्च शिक्षा रूपी बच्चे को दवा देकर ठीक करने का काम क्यों नहीं कर रहे। इस कार्य की ओर अनदेखी का मतलब देश के भविष्य के साथ खिलवाड़ करना है। उन्हें यह समझना होगा कि समस्या को सामने लाने अथवा नसीहत मात्र देने से काम नहीं चलने वाला अगर उच्च शिक्षा में सुधार के लिए कड़े कदम नहीं उठाए गए तो सामाजिक असमानता न तो बढ़ेगी ही विकास की गति भी धीमी बढ़ सकती है।

स्यूडो निजीकरण

इसे हम निजीकरण नहीं कह सकते। इस श्रेणी में उच्च शिक्षा निजी हाथों में होती है परन्तु सरकार द्वारा पूर्णतः अनुदानित होती है। इस श्रेणी में संस्थान का प्रबन्धन निजी हाथों में होता है जबकि उसका वित्तीय प्रबन्ध सरकार करती है।

भारतीय विद्वानों का खेमा उच्च शिक्षा में निजीकरण को लेकर दो वर्गों में विभाजित है। एक पक्ष निजीकरण को उच्च शिक्षा के विकास हेतु एक अवसर के रूप में प्रत्यक्षित करता है तो दूसरा पक्ष निजीकरण को खतरे के रूप में देखता है। दोनों ही पक्षों के पास अपने–अपने तर्क हैं परन्तु हमें तटस्थ होकर पूरी स्थिति का विश्लेषण करने की आवश्यकता है कि वास्तव में निजीकरण भारतीय उच्च शिक्षा के हिम में है और किस सीमा तक है, इस बात पर भी चर्चा होनी चाहिए कि निजीकरण को किस रूप में स्वीकार किया जाए।

भारत में निजीकरण के समर्थक इसके पक्ष में कई तर्क देते हैं। निजीकरण से उच्च शिक्षा के लिए वित्तीय संसाधन एकत्रित करने में सहायक मिलेगी, जिससे नए संस्थानों की स्थापना सम्भव हो सकेगी एवं व्यापक पहुँच का लक्ष्य सरल हो जाएगा।

निजी क्षेत्रों के भागीदार बनने से प्रतियोगिता की भावना बढ़ेगी एवं गुणवत्ता की स्थिति में सुधार होगा।

उच्च शिक्षा सामाजिक और आर्थिक परिवर्तन का एक सशक्त माध्यम है। मानव संसाधनों के विकास की दृष्टि से उच्च शिक्षा की भूमिका सर्वोपरि है। किन्तु स्वतन्त्रता प्राप्ति के विगत 60 वर्षो में देश में उच्च शिक्षा की विकास यात्रा पर दृष्टिपात किया जाए तो हम पाते हैं कि देश में उच्च शिक्षा की विकास यात्रा पर दृष्टिपात किया जाए तो हम पाते हैं कि देश में उच्च शिक्षा का मात्रात्मक प्रसार तो काफी हुआ है किन्तु उच्च शिक्षा की गुणात्मकता में निरन्तर कमी आई है। उच्च शिक्षा के क्षेत्र में वर्ष 2022 में देश में 1000 से अधिक विश्वविद्यालय एवं 43,000 से अधिक कॉलेज हैं जिनमें लगभग 37 करोड़ छात्र–छात्राएँ अध्यनरत है। किन्तु यदि इस भीड़ में अपने–अपने विषय का समुचित, आधिकारिक ज्ञान रखने वाले विद्यार्थियों की पहचान की जाए तो उनकी संख्या शायद 10 प्रतिशत भी न निकले। विद्यार्थियों में पढ़ने की ललक और शिक्षकों में पढ़ाने की इच्छा दिनों–दिन कम हुई है। वस्तुतः उच्च शिक्षा देश की वर्तमान एवं भावी आवश्यकताओं को पूरा करने में असफल रही है।

निजीकरण से तात्पर्य राज्य से हटकर किसी उपक्रम, योजना या नीति को नियन्त्रण या दायित्व प्रदान करना है। स्ववित्त–पोषण की अवधारणा से तात्पर्य जो व्यक्ति शिक्षा प्राप्त करे वही उसका मूल्य अदा करे अर्थात् अर्थशास्त्र की भाषा में जो व्यक्ति वस्तु का उपभोग करेगा, वही उसका मूल्य भी चुकाएगा। उदारीकरण नियम एवं कानून के तहत सरकार द्वारा दी गई ढील की प्रक्रिया को कहते हैं। व्यवसायीकरण का आशय लाभ प्राप्ति के उद्देश्य से शोषण करने की कहते हैं। कैपिटेशन शुल्क महाविद्यालय से तात्पर्य ऐसे संस्थान से है जो राज्य द्वारा संचालित होने के साथ राज्य द्वारा प्रदत्त वित्त पर विश्वास न करके उच्च शुल्क प्राप्त करते हैं। स्व–वित्तपोषित का अर्थ है किसी भी संस्थान के लिए स्वयं के संसाधनों द्वारा वित्तीय सहायता प्राप्त करना। जो संस्थाएं स्वयं के आर्थिक प्रयासों के परिणामस्वरूप विकसित है, स्व–वित्तपोषित संस्थाएँ कहलाती हैं। सरकारी नीतियों के परिणामस्वरूप इनका जन्म हुआ और निजी हाथों में जाने के कारण अनेक विवादों का प्रादुर्भाव हुआ।

विश्वविद्यालयों व उच्च शिक्षा संस्थाओं के अनुदान में कटौती, उदारीकरण की प्रक्रिया, निजी क्षेत्र को महत्व, शिक्षा को 'नॉन मेरिट गुड्स' की श्रेणी में रखना तथा प्रधानमंत्री द्वारा गठित समिति (24

अप्रैल 2000) द्वारा **'ए पॉलिसी फ्रेमवर्क फॉर रिफार्म एन एजूकेशन' में** निजीकरण आदि पर जोर दिया गया।

देश के दो शीर्ष उद्योगपतियों श्री मुकेश अम्बानी और श्री कुमार मंगलम् बिड़ला द्वारा व्यापार और उद्योग पर गठित प्रधानमंत्री सलाहकार परिषद को **'ए पॉलिसी फ्रेमवर्क फॉर रिफार्म एन एजूकेशन'** नाम से 24 अप्रैल 2000 को प्रस्तुत रिपोर्ट में उच्च शिक्षा के निजीकरण की पुरजोर वकालत करते हुए उच्च शिक्षा को दी जा रही सब्सिडी में कटौती कर इसकी भरपाई फीस बढ़ाकर करने की सिफारिश की गई। इस विशेष अध्ययन दल के विचार में उच्च शिक्षा से जन सामान्य को लाभ न पहुँचकर कुछ विशेष लोगों को ही लाभ पहुँचता है। इसलिए इस पर होने वाला व्यय छात्र द्वारा ही वहन किया जाना चाहिए। सरकार को उच्च शिक्षा के क्षेत्र में अपनी भूमिका सीमित कर निजीकरण को बढ़ावा देना चाहिए। उन्होंने निजी विश्वविद्यालय विधेयक लाने और विश्वविद्यलायों से बाजार की आवश्यकताओं को दृष्टिगत रखते हुए पाठ्यक्रम तैयार करने को कहा। उनके अनुसार प्राथमिक और माध्यमिक शिक्षा का केन्द्रीय उत्तरदायित्व सरकार का है जबकि उच्च शिक्षा को निजी क्षेत्र को सौंप दिया जाना चाहिए। यह रिपोर्ट शिक्षा को लागत और लाभ के सिद्धानत पर आधारित करती हुई बाजार आधारित शिक्षा प्रणाली की वकालत करती है। यह उच्च शिक्षा को देशी–विदेशी पूँजी निवेश के लिए खोलकर बाजार बनाने पर बल देती है। रिपोर्ट में विश्वविद्यालयों की महँगी फीस का भुगतान करने के लिए विद्यार्थियों के लिए ऋण देने का प्रावधान और ऋण वसूलने वाली एजेन्सी की व्यवस्था की सिफारिश भी की जाती है। किन्तु विश्वविद्यालय से पढ़कर निकले छात्र को रोजगार की कोई गारन्टी नहीं दी गई है। अतः ऋण में डूबा और रोजगार की तलाश में भटकता छात्र इस ऋण को चुकाने के लिए धन कहाँ से लाएगा? इस प्रश्न पर उत्तर रिपोर्ट में उपलब्ध नहीं है।

उच्च शिक्षा की वित्तीय चुनौतियों को दृष्टिगत रखते हुए उच्च शिक्षा का निजीकरण किया जाना व्यवहारिक दृष्टिकोण से उचित प्रतीत होता है। किन्तु यदि निजीकरण के नाम पर शिक्षा का व्यवसायीकरण होने लगे तो निजीकरण एक अभिशाप ही सिद्ध होगा। निजीकरण के विषय में शिक्षा जगत से जुडे लोगों की सामान्य धारणा यही है कि निजीकरण पर चलने वाले शिक्षा केन्द्र मात्र अपने लाभ के लिए कार्य करेगें और राष्ट्रीय की अनदेखी होगी। निजीकरण के चलते निजी शिक्षा संस्थानों की बाढ़ आ जाएगी किन्तु उच्च शिक्षा आम व्यक्ति की पहुच से दूर होती चली जाएगी। उच्च शिक्षा ऊँची फीस दे सकने वाले साधन सम्पन्न लोगों तक ही सीमित होकर रह जाएग। उच्च शिक्षा के लिए अनुदानों को समाप्त करने और शिक्षा सम्बन्धी फैसलों को बाजार की शक्तियों के रहमोकरम पर छोड़ने का परिणाम यह होगा कि शैक्षिक पूँजी के वितरण और इस कारण आय के वितरण की असमानताएँ बढ़ेंगी। ऐसी स्थिति में जनता के अधिक उन्नत वर्ग ही बाजारी शक्तियों से उत्पन्न शैक्षिक अवसरों का लाभ उठा सकेंगे जिससे शैक्षिक विषमताएँ और बढ़ेंगी। यह सभी स्तरों पर सभी को शिक्षा के समान अवसर प्रदान करने के राज्य के संवैधानिक उत्तरदायित्व के विरीत होगा। निःसन्देह इससे कल्याणकारी, लोकतान्त्रिक, समाजवादी राज्य की भूमिका प्रश्नों के घेरे में आ जाएगी।

शिक्षा के निजीकरण के दुष्प्रभाव शिक्षक शिक्षा के क्षेत्र में सामने आने लगे हैं। शिक्षक शिक्षा के क्षेत्र में स्ववित्त पोषित संस्थाओं को अनुमति देने के परिणामस्वरूप विगत 7–8 वर्षो में शिक्षक शिक्षा में स्व–वित्तपोषित संस्थाओं की बाढ़ सी आ गई है। इन संस्थाओं के प्रवेश में धाँधली, शुल्क की असीमित और सौदेबाजी के आधार पर वसूली, स्टॉफ की नियुक्ति में अनियमित्ताएं आदि दिखाई देने लगी हैं। इस कारण शिक्षक शिक्षा में गुणात्मक सुधार का उद्देश्य कहीं पीछे छूटता प्रतीत होने लगा है।

उच्च शिक्षा के पाठ्यक्रम में बढ़ती भीड़ को नियन्त्रित करने पर किसी की असहमति नहीं होनी चाहिए। देश के युवा वर्ग को उच्च शिक्षा के भँवर जाल में फँसकर निरूद्देश्य भटकने और कुंठाग्रस्थ होने से बचाया ही जाना चाहिए। सामान्य उच्च शिक्षा में प्रवेश रूचि, योग्यता और क्षमता के आधार पर ही मिलना चाहिए। इसके लिए माध्यमिक स्तर से ही शिक्षा को सशक्त और रोजगारोन्मुखी बनाए जाने हेतु बड़े पैमाने पर प्रयास किये जाने की आवश्यकता है ताकि विद्यार्थी उच्चतर माध्यमिक स्तर पर वांछित व्यावसायिक और तकनीकी कौशल प्राप्त कर आर्थिक दृष्टि से आत्म निर्भर बन सके। स्नातक और परस्नातक स्तर के व्यावसायिक पाठ्यक्रमों का भी विकास किया जाना चाहिए ताकि इच्छुक विद्यार्थी प्रवेश लेकर विशेषाता अर्जित कर सके और अपनी योग्यता के अनुसार व्यवसाय प्राप्त कर

सके। इससे सामान्य उच्च शिक्षा की ओर निरूद्देश्य भागती भीड़ पर नियंत्रण तो लगेगा ही साथ ही सरकार के लिए अच्छे स्तर की उच्च शिक्षा की व्यवस्था करना भी सम्भव हो सकेगा।

आर्थिक संकट से उबरने के लिए विश्वविद्यालयों और महाविद्यालयों को स्व–वित्तपोषित पाठ्यक्रमों के अतिरिक्त अन्य प्रयासों को भी अपनाना चाहिए। इन प्रयासों में स्वैच्छिक अनुदान, विदेशी छात्रों से सहयोग, औद्योगिक सहयोग और विदेशों से प्रायोजित अध्ययन के रूप में संसाधन जुटाना आदि सम्मिलित है। विश्वविद्यालायों के विभागों द्वारा कन्सल्टेन्सीज के माध्यम से भी धन जुटाया जा सकता है। एक अन्य महत्वपूर्ण उपाय के रूप में सरकार महाविद्यालयों और विश्वविद्यालयों को दिए जा रहे अनुदान उनके श्रेष्ठ प्रदर्शन के आधार पर प्रदान कर उन्हें परिणामोन्मुख बना सकती है। विश्वविद्यालयों को भी चाहिए कि वे अपने कार्य–कलापों मं वित्तीय अनुशासन का पालन कर अपने वित्तीय स्थिति को सुदृढ़ करें और सरकार पर अपनी निर्भरता को कम करें। सरकार को अपने कार्य–कलापों द्वारा कल्याणकारी राज्य की भूमिका का निर्वाह करते हुए मानव संसाधनों का विकास कर राष्ट्र के चतुर्मुखी विकास में अपना सार्थक योगदान देना चाहिए।

सन्दर्भ

1. Agrawal, Raj (2004), Privatization in the Context of Globlization, WTO and GATS in Indian Services, University News, Vol.42 (07), 16-22pp.
2. AIU, (2004), GATS and Implication on Higher Education, University News, Vol. 43 (06), 7-13pp
3. NIEPA, (2001), Trade in Education Service under WTO Regime-An Indian Response. National Institute of Educational Planning and Administration, New Delhi.
4. Singh, M.Kumar (2006) Challenges of Globlization on Indian Higher Education, University News, Vol.44 (19), 8-14 pp.
5. World Bank (2000), Higher Education Developing Countries: Peril and promise, www.worldbank.org.
6. थोराट, एस. (2007, मई), पहुँच और गुणवत्ता पर उठते सवाल, योजना, पेज 17–19।
7. राघव, वि. सिंह (2004, सितम्बर), भारत में उच्च शिक्षा पर व्ययः एक दृष्टि, कुरूक्षेत्र, पेज 15–20